नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः ।

न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वधासंग्रहतत्पराः ।।66।।

अन्वय नूनं मत्तः परं पिण्डविच्छेददर्शिनः स्वधासंग्रहतत्पराः श्राद्धे प्रकामभुजः न (सन्ति)।

अनुवाद मेरे पश्चात् पुत्र के अभाव में पिण्ड के लोप (विच्छेद) की आशटा करके पितर (वंश्य) श्राद्ध के अवसर पर स्वधा (पितरों का भोजन) संग्रह करने में लगे हुए निश्चय ही तृप्त होकर भोजन नहीं करते हैं।

टिप्पणियाँ

मत्तः (परम) अस्मद्, पञ्चमी विभक्ति एकवचन, तसिल् प्रत्यय (पंचमी के अर्थ में) 'पञ्चम्याः तसिल्' मेरे पश्चात् अर्थात् मेरी मृत्यु के पश्चात्।

वंश्याः वंशे भवाः पूर्वज, वे जो वंश में पूर्व उत्पन्न हुए थे पर मर गये अर्थात् पितर।

स्वधाः स्वधायाः संग्रह (षष्ठी तत्पुरुष) स्वधासंग्रहः, तत् परं (प्रधानं) येषां ते (पितरः)। स्वधा नामक अपने भोज्य पदार्थ का संग्रह करने में लगे हुए (मेरे) पितर।

विशेष 'स्वाहा' तथा 'स्वधा' वे ध्वनियाँ हैं जिनका उच्चारण देवताओं तथा पितरों को आहुति अर्पण करते हुए किया जाता है। जैसे.'अग्नये स्वाहा'। स्वाहा का प्रयोग देवताओं के लिए स्वधा का प्रयोग पितरों के लिए किया जाता है। परन्तु देवताओं तथा पितरों को अर्पित किये जाने वाले हविष्य को भी क्रमशः स्वाहा तथा स्वधा कहते हैं। इस प्रकार स्वाहा और स्वधा देवताओं तथा पितरों के भोजन का भी नाम है और उन्हें भोजन (हविष्य) अर्पण करते समय उनके प्रति किए गए सम्बोधन भी हैं। पितर यमलोक में

निवास करते हैं जिसे पितृलोक भी कहते हैं यम पितरों का स्वामी हैं और उसे पितृपति कहते हैं। पितृलोक में रहने वाले पितरों का भोजन 'स्वधा' है। अतएव पितर इस बात के इच्छुक रहते हैं कि उन्हें निरन्तर अविच्छिन्न रूप में अपना भोजन (स्वधा) प्राप्त होता रहे परन्तु स्वधा की प्राप्ति तभी सम्भव है जब उसके कुल में वंशधर पुत्रों की सन्तति चलती रहे। दिलीप तक आकर यह सन्तति टूटती प्रतीत हो रही है क्योंकि वंश को चलाने वाले तथा उनके पितरों को भोजन देने का अधिकारी पुत्र उसे सुदक्षिणा से प्राप्त नहीं हुआ है। इसी कारण दिलीप अपने पितरों को जब स्वधा (भोजन) अर्पण करता है वे तो उसे पेट भरकर नहीं खाते प्रत्युत भविष्य के लिए जोड़कर रखते हैं। जैसे निर्धन मनुष्य उपलब्ध धन को व्यय न कर भविष्य के लिए संग्रह करके रख छोड़ते हैं। पितर जानते हैं कि दिलीप के पश्चात् उन्हें स्वधा प्राप्त नहीं होगा। अतः जो मिलता है उसे भविष्य के लिए बचाकर रखते हैं। पितरों के इस मानसिक दुःख का विचार करके ही दिलीप पुत्र-प्राप्ति की कामना से अपने कुलगुरु वशिष्ठ जी के पास आए। कालिदास ने अपनी कृतियों में पितरों की इस चिन्ता का कई बार उल्लेख किया है। देखिए,

''अस्मात् परं ..... वत पितरः पिबन्ति।'' (अभिज्ञानशाकुन्तलम् 6.25)।

इस प्रकार के निर्देशों के आधार पर विद्वान् मानते हैं कि सम्भवतः कालिदास स्वयं पुत्रहीन थे। इसीलिए पुत्र के अभाव का कष्ट उनके काव्य में यत्र-तत्र प्रस्फुटित हुआ दिखाई देता है।

पिण्ड पिण्डस्य विच्छेदः इति (षष्ठी तत्पुरुष), पिण्डविच्छेदं पश्यन्ति इति पिण्डविच्छेददर्शिनः। 'वंश्याः' (पितरः) का विशेषण। वे पितर जो पिण्डदान के विच्छेद को देख रहे हैं अर्थात् जो इस बात से आशंकित एवं दुःखी हैं कि भविष्य में उन्हें पिण्डदान देने वाला नहीं है। देखिए, **''पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः।''** (गीता 1.41)

पिण्ड यह भात का बना गोल लोंदा होता है जिसे श्राद्ध करते समय पितरों को उनके भोजन के रूप में अर्पित किया जाता है।

प्रकामभुजः प्रकाम (खूब) भोक्त शीलं येषां ते पेट भरकर खाने वाले, 'वंश्याः' का विशेषण। 'काम' 'प्रकाम' शब्द का अर्थ है-पर्याप्त, खूब जी भरकर।